''आमुख'' के पचास साल और इंटर्नेट पर इसके प्रकाशन के अवसर पर

तुषार कांति

''आज के इंसान के आगे निर्णय के सारे रदवाजे बंद हैं। हर दरवाजा किसी न किसी सपने, सच्चाई, उम्मीद, कशमकश, स्वाधीनता, सिद्धांत, वहशत, प्रेम, कल्पना, और प्रतिभा की कब्र का दरवाजा है। इसे जान लेने के बाद बोध और चेतना से भाराक्रांत आदमी के लिए अन्तहीन जिज्ञासा और सन्देह के अलावा और कोई उपाय नहीं रह जाता। बिना किसी द्विधा के कुछ भी अपनाने की सुविधाएं उसे ठुकरानी पड़ती हैं। इसीलिए न चाहते हुए भी उसे अन्दर और बाहर 'महाभारत' की लड़ाइयां लड़नी पड़ती हैं। उसे केवल भाषा, आंगिक और प्रकरण ही नहीं – बल्कि अनुभव के सम्पूर्ण स्वरूप का नये सिरे से आविष्कार करना पड़ता है। यह विरामहीन अतिक्रम ही आधुनिक रचना की चरम शर्त है, प्रधान चरित्र लक्षण है। इसीलिए आधुनिक रचना आवश्यक रूप से आत्मपरक है, उसे समझने के लिए लेखक को समझा जाए यह जरूरी है।'' – कंचनकुमार

पहले 'अधुनिक भावबोध की रचनाओं का त्रैमासिक' के तौर पर प्रारंभ आमुख अपनी कठोर आर्थिक अवलंबिता की नीति के कारण चंद अंकों के बाद अनियतकालीन संकलन में तब्दील हो गया। आमुख ने अपने पाठकों को ही अपनी वित्तीय बुनियाद मानते हुए विज्ञापनों को सिरे से नकार दिया था। अपने अंतिम संकलन तक आमुख अपनी इस नीति पर मजबूती के साथ खड़ा भी रहा।पहले संकलन के लिए 1965 के ग्रीष्म में किसी दिन पत्रिका के तीसरे पृष्ठ पर संपादक कंचन कुमार ने लेखकीय और पाठकीय संकट और सरोकारों की ओर इशारा करते हुए उपरोक्त मंतव्य व्यक्त किये थे। रचना को समझने के लिए रचनाकार को समझने का उनका आग्रह असल में रचना और रचनाकार दोनों के सामाजिक परिवेश की पृष्ठभूमि से काट कर देखने–दिखाने की प्रवृत्ति पर आघात था। 'आमुख' ने कभी 'बीच का रास्ता' नहीं लिया। 1965 से 2004 तक कुल 45 संकलनों को देखने के बाद पाठक निश्चय ही इस बात से सहमत होंगे। समाज में जो उथल पुथल जारी है, उस से निर्लिप्त रहते हुए फूलों और बादलों, प्रमिका के अधरों और उरोजों में पनाह खोजना पलायनवाद ही नहीं, बेशक एक साजिशाना कार्रवाई भी है, आमुख के हर संकलन ने कदम कदम पर अपने सुधी पाठकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है।

पहले संकलन में प्रकाशित कंचन कुमार रचित नाटिका 'अन्यथा' में इंटर्व्यू देने आये युवक निरंजन चौधरी के जरिये उन्होंने अपनी पीढ़ी के दर्द का बयान कुछ इन लफ्जों में किया भी : 'क्या करूं सर, हमारी पीढ़ी की सबसे बड़ी परेशानी हम अभिव्यक्ति की कठिनाइयों को 'सफर' कर रहे हैं।' ....अभिव्यक्ति की इन्हीं कठिनाइयों की ओर संकेत करते हुए सर्वहारा कवि मुक्तिबोध ने तो अभिव्यक्ति के खतरे उठाने का आह्वान ही किया था। काशिनाथ सिंह, राजकमल चौधरी और धूमिल जैसे रचनाकारों का आमुख के पहले ही अंक में स्थान पाना पत्रिका की स्तरीयता का परिचायक है।

बिल्कुल शुरू से लेखकों और कवियों के साथ ही आमुख ने विभास दास, अनिल करंजई जैसे चित्राकारों को भी अभिव्यक्ति का मंच मुहैया किया। पांचवें अंक के आवरण के अंतिम पृष्ठ पर काफी अराजकता की बातें थीं पर अंत में लिखा था : '....आमुख व्यवस्था के खिलाफ मिसाइल लांच करने का एक मंच है'। आमुख ने नक्सलबाड़ी के किसान जन उभार के बाद मानो मकसद पा लिया था। 69 में आया छठा संकलन

'समाज, साहित्य सभ्यता विरोधी संकलन' था। इस में संपादक कंचन कुमार ने लिखा : 'आज यथा स्थिति से रचनाकार का कोई लगाव नहीं हो सकता है। उसकी दिलचस्पी परिवर्तन या क्रांति से होगी। कवि अगर पार्ट टाइम नहीं है तो वह चीखेगा ही। ....उसके शब्दों को बुलेट और भाषा को पोस्टर में बदल दे।' आठवें संकलन में प्रकाशित 'हेडक्वर्टर को उड़ा दो', जो चीन में जारी महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति पर जॉन रॉबिन्सन की रचना पर केंद्रित था, से आमुख की दिशा तय हो गयी। आमुख का नवां संकलन 'साम्राज्यवाद विरोधी साहित्य संकलन' के तौर पर प्रकाशित हुआ। नौवां संकलन सरोज दत्त द्वारा बांग्ला में अनूदित बर्तोल्त ब्रेख्त की रचना के हिंदी अनुवाद के साथ आया। इसी अंक में हिंदी पत्रिका 'फिलहाल' के संपादक से पोलिमिकल बहस के रूप में कंचन कुमार के लेख का प्रकाशन भी हुआ। 1 मई 1974 को प्रकाशित आमुख के चौदहवें संकलन में कोंडापल्ली सीतारामय्या के दिशा परिवर्तनकारी राजनीतिक प्रबंध 'वर्गदुश्मन के सफाये के सवाल पर' का हिंदी अनुवाद प्रकाशित कर संशोधनवादी मौकापरस्त तत्वों द्वारा शहीद कामरेड चारु मजुमदार पर हमलों के रूप में की जा रही क्रांतिकारी खेमे में विघ्वंसकारी कार्रवाइयों के खिलाफ स्पष्ट पक्षधरता की मिसाल पेश कर आमुख ने नयी परंपरा की नींव डाली। इस लेख का मूल तेलुगु से हिंदी में अनुवाद तब उस्मानिया विश्वविद्यालय और हैदराबाद के छात्र आंदोलन में अहम भूमिका निभा रहे तुषार कांति ने किया था। क्रांतिकारी तेलुगु पत्रिका 'पिलुपु' (बुलावा या पुकार) में छपे पांच राजनीतिक प्रबंधों की श्रृंखला में यह पहला लेख था, जिसका अनुवाद हिंदी भाषी क्षेत्रों में संशोधनवादी हमलों को नाकाम करने और उत्तर भारत की क्रांतिकारी जनता को पार्टी के भीतर चल रही वैचारिक पहल से परिचित करने की गरज से आमुख के लिए किया गया था।

1981 के अक्तूबर से आमुख का प्रकाशन दिल्ली से होने लगा। 1983 में संपन्न क्रांतिकारी संस्कृति की अखिल भारतीय लीग (एआईएलआरसी) के प्रथम अधिवेशन की विस्तृत रिपोर्ट के साथ फरवरी 1984 में आमुख का 22 वां संकलन प्रकाशित हुआ। इसी वर्ष दिसंबर में प्रकाशित 23 वें संकलन में तब के आंध्रप्रदेश के क्रांतिकारी रचनाकार संघ 'विरसम्' द्वारा आयोजित 'गांवचलो' अभियान की प्रशंसा करते हुए प्रदीर्घ रिपोर्ट और टिप्पणि प्रकाशित हुई।

1993 से आमुख अखिल भारतीय क्रांतिकारी सांस्कृतिक संघ के मुखपत्र के तौर पर प्रकाशित होने लगा। यह सिलसिला पैंतालिसवें अंक तक भी जारी रहा।

आमुख में प्रकाशित/पहली बार प्रकाशित लेखकों कवियों में कई आज प्रसिद्ध नाम हैं। घूमिल, विष्णुचंद्र शर्मा, मुद्रा राक्षस, काशीनाथ सिंह, शंभुनाथ सिंह और राजकमल चौधरी आदि कुछ ऐसे नाम हैं जो आमुख के प्रवेशांक से जुड़े थे। इनके अलावा लीलाधर जगूड़ी, रवींन्द्र कालिया, काशीनाथ सिंह, उपेंद्रनाथ अश्क, और प्रयाग शुक्ल जैसे कई नाम हैं जो आमुख से जुड़े और आज हिंदी साहित्याकाश में सम्मान के साथ लिये जाते हैं।

क्रांतिकारी सांस्कृतिक मोर्चे पर आमुख ने एक खास भूमिका अदा की है जिससे अन्य दर्जनो पत्र–पत्रिकाओं की भीड़ से इसे अलग पहचान मिली। हम आमुख के संपादक कंचन कुमार, अधिकतर संकलनों की सॉफ्ट कापी तैयार करने में तकनीकी सहयोग के लिए शोधर्थी अभिशेक भट्टाचार्य तथा अन्य सभी सहयोगकर्मियों का तहेदिल से शुक्रगुजार हैं जिनकी वजह से आनेवाली पीढ़ियों को आमुख आभासी जगत में उपलब्ध हो सकेगा।आमुख के पचास वें वर्ष (जब कि इसके प्रकाशन के रुकजाने के बाद 11 बरस बीम रहे थे) अंतर्जाल/इंटर्नेट पर आमुख के सभी 45 संकलन उपलब्ध कराते हुए अपना कर्तव्य पूरा करने में सफल हुए इस एहसास के साथ आपके हाथों में इन्हें सौंप रहे हैं।